ECONSPEAK: A Journal of Advances in Management IT & Social Sciences,
Vol. 9, Issue 9, September 2019 Impact Factor 6.596 ISSN: (2231-4571)
www.skirec.org Email Id: skirec.org@gmail.com

राजस्थान की सामाजिक संरचना में स्त्रियों की दशा
(पूर्वी राजस्थान के संदभ में)

डॉ. मीना अम्बेश
सह आचार्य, इतिहास
बाबू शोभाराम राजकीय कला महाविद्यालय, अलवर

शोध सारांश–प्रस्तुत शोधपत्र में राजस्थान की सामाजिक संरचना में स्त्री की स्थिति का अध्ययन करने का प्रयास किया गया है। राज परिवार की स्त्रियों की स्थिति उन्नत अवस्था में थी। उनकी शिक्षा की उत्तम व्यवस्था थी, साथ ही उन्हें राजनीतिक व प्रशासनिक अधिकार भी प्राप्त थे। राज परिवार की स्त्रियों के पास सैनिक टुकड़िया भी होती थी। रानियों द्वारा जागीरो का प्रबंध भी किया जाता था। कालांतर में जब राजपूताने पर ब्रिटिश आधिपत्य स्थापित हो गया तो रानियों के वंशानुगत अधिकारों पर नियंत्रण स्थापित करने का प्रयास किया गया। रानियों के राजनीतिक प्रभाव को समाप्त करने के लिए उनकी आर्थिक स्वायत्तता को समाप्त करने का प्रयास किया गया। साथ ही बहुत से राज्यों में जनानी डयोढ़ी की आय को राज्य की आय में शामिल कर रानियों को आर्थिक रुप से कमजोर बना दिया। मध्यम वर्ग की स्त्रियों में शिक्षा के प्रति जागरूकता का अभाव था, लेकिन वह अच्छी ग्रहणी थी। साथ ही वह सामाजिक उत्सव में भाग लेती थी । जहां तक जन सामान्य वर्ग की स्त्रियों का प्रश्न है तो वह अपने पतियों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर उनके कार्य में हाथ बटाती थी। साथ में ही बहुत सारे लघु और कुटीर उद्योग धंधों में लगी हुई थी, जैसे की टोकरी बनाना, कपड़ा बुनना, लोहारी का काम, दर्जी का काम आदि में महिलाएं अपने पतियों का हाथ बटाती थी।

शब्दकुंजी–राजस्थान, स्त्रियां, अलवर, भरतपुर, धौलपुर, करौली, राज परिवार, कुलीनवर्ग की स्त्रियां, मध्यमवर्ग की स्त्रियां, जनसामानय वर्ग की स्त्रियां ।

राजपूताना (राजस्थान) जिसे इतिहासकार कर्नलटॉड ने रजवाडा व रायथन नाम प्रदान किया, में राजपूतों की सार्वभौमिक सत्ता थी और संभवतः इसी कारण अंग्रेजों ने इसे राजपूताना नाम से पुकारा। 1800 ई में श्री जॉर्ज थॉमस ने इसके लिए सर्व प्रथम राजपूताना शब्द का प्रयोग किया।

राजस्थान की सामाजिक संरचना में स्त्रियों की स्थिति को जानने के लिए हम स्त्रियों को तीन वर्गों में बांट सकते हैं–1. कुलीन या राज परिवार की स्त्रियां, 2. मध्य वर्ग और 3. जनसामानय वर्ग की स्त्रियां।

1. राज परिवार या कुलीनवर्ग की स्त्रियों की स्थिति

इस वर्ग में राज परिवार या उच्च/कुलीन वर्ग की स्त्रियों को शामिल किया जा सकता है।

राजपरिवार की स्त्रियों की स्थिति अन्य वर्ग की स्त्रियों की तुलना में उन्नत अवस्था में थी। स्त्रियों को परम्परागत शिक्षा दी जाती थी, जिसका स्वरूप मौखिक था। राजघरानों एवं ठिकानो में, रानियों तथा ठकुरानियों को मौखिक शिक्षा के माध्यम से कुलीय परम्परा के प्रचलित रीति–रिवाजों एवं परिवार के तौर–तरीकों तथा सामाजिक व सांस्कृतिक मूल्यों से परिचित कराया जाता था।

अर्थात स्त्रियों को परम्परागत शिक्षा व्यवस्था के तहत चरित्र निर्माण, वीरता, सच्चाई, वफादारी एवंनिष्ठा से सम्बन्धित धार्मिक एवं ऐतिहासिक साहित्य सम्बंधी पुस्तकें पढ़ाई जाती थीं। उच्च तथा साधन सम्पन्न वर्ग में ही स्त्री शिक्षा का सामान्यतः अधिक प्रचलन था। जिनकी शिक्षा का प्रबन्ध घरों में ही किया जाता था। राजघरानों की रानियों द्वारा रचित गद्य एवं पद्य साहित्य तथा उर्दू एवं फारसी भाषा के शब्दों के प्रयोग से उनकी साहित्यिक क्षमता का ज्ञान होता है।[1]

अलवर नरेश बन्नै सिंह की पटरानी आनन्दकंवर राणावत ने ***'आनन्दसागर'*** लिखकर अपनी शैक्षणिक योगता का परिचय दिया।[2] वहीं दूसरी रानी रूपदेवी जो रामभक्ति में लीन रहती थी, ने अपने अराध्यदेव राम की महिमा का गुणगान करते हुए ***'रामरस', 'रूपमंजरी', 'रूपकुमारीमंगल'*** जैसे काव्य ग्रन्थों की रचना की। रानी रूपदेवी द्वारा रचित पदों से हमें सरयू के तट पर रामरस की अभिनव कल्पना देखने को मिलती है।[3]

भरतपुर महाराज बलदेवसिंह की रानी अमृतकौर ने ***'चतुरसखी'*** एवं ***'चतुरप्रिया'*** उपनाम से गीतकाव्य भक्तिरस पदों की रचना की तथा महाराजा रामसिंह की रानी गिरिराज कुंवर ने ***'ब्रजविलास'*** और ***'पाकप्रकाश'*** ग्रन्थ लिखे।[4]

स्त्री शिक्षा की इस परम्परागत व्यवस्था में शिक्षा देने के लिए अनुभवी ब्राह्मण अध्यापक–अध्यापिका, पुरोहितानी एवं पुरोहित नियुक्त किये जाते थे। अलवरराज घराने की रानियों एवं ठकुराइनों, उपपत्नियो और बड़ारणों की प्रशासनिक कुशलता तथा शासन संचालन की योग्यता से उनके राजनीतिक अनुशासन एवं प्रशासनिक प्रशिक्षण के उचित प्रबन्ध की भी पुष्टि होती है।[5]

राजमाताऐं प्रशासनिक रूप से भी कुशल थी और शासन संचालन की योग्यता से उनकी राजनैतिक अनुशासन व प्रशिक्षण की पुष्टि होती है। राजघराने की रानियां सैनिक प्रशिक्षण से भी युक्त थी।

इसी के साथ जनानी ड्योढ़ी की व्यवस्था, जागीरगाँवों का प्रबन्ध, कामदारों, फौजदारों आदि को दिये गये आदेशों एवं आय–व्यय का ब्यौरा रखने, ऋणों की अदायगी सम्बन्धी पत्रों एवं कार्यकुशलता से उनकी शैक्षणिक योग्यता का अन्दाजा लगाया जा सकता है। 1855 ई. में अलवर की सूरजकंवर के साथ दहेज में आई बीकानेर महाराजा सरदारसिंह की खवास ओमजी और प्रभाती शिक्षित थी तथा वे अपने जागीर गाँवों का प्रबन्ध स्वयं करती थी।[6]

विभिन्न राजघरानों की रानियों, उप–पत्नियों, बडारणों व पातरों आदि को पत्र लेखन कला के प्रशिक्षण पर विशेष ध्यान दिया जाता था। पत्र बहुत अच्छे तरीके से उपमाओं सहित, आदरसूचक शब्दों तथा जिसे लिखे गये उसके प्रति स्नेह, वात्सल्य, प्रेम भावना से ओतप्रोत भावनात्मक ढंग से लिखे जाते थे। उदाहरणार्थ संवत 1847 ई. में करौली से हरकंवर बाई ने अपने भाई जयपुर महाराजा सवाई जयसिंह को पत्र लिखा–

सिद्ध श्री सवाई जयपुर महासुभसुधाानेक सर्व औपमा दीजे सौई सोहे गंगाजल निमल पुराय पवित आसाविसराम धरम की मूरतमही की सूरज कैसी तेज चन्द्रमा कैसी सीतलाई दिन दिन चढ़तो तेज प्रताप विराजमान महाराज धिराज.....

से रानियों के सामान्यतः शिक्षित होने का पता चलता है।

राजघरानों और ठिकानों में महिलाओं के सैनिक प्रशिक्षण की व्यवस्था थी। रानियों, ठकुरानियों को शस्त्र संचालन सिखाया जाता था। उदाहरणार्थ, मत्स्यांचल की करौली रियासत की कच्छवाहा रानी के 200 आदमियों की एक सैनिक टुकड़ी थी।[7]

इस वर्ग की राजमाताओं को राजनीतिक अधिकार भी था। अपने अल्पवयस्क राजकुमार के उत्तराधिकार के अवसर पर बहुधा राजमाताएं शासन की बागडोर अपने हाथ में रखती थी अथवा महाराजाओं के उत्तराधिकारियों के अभाव में निकट के वंश से गोद लेने में उनकी भूमिका रहती थी। डूंगरपुर की राजमाता ने महारावल लक्ष्मण सिंह के बाल्यकाल में राज्य कार्य में सहयोग दिया। राजमाताओं का जयपुर, जोधपुर, बीकानेर, भरतपुर राज्यो में यही योगदान रहा। अलवर राजघराने की रानियों एवं ठकुराइनों, उपपत्नियों और बड़ारणों की प्रशासनिक कुशलता तथा शासन संचालन की योग्यता से उनके राजनीतिक अनुशासन एवं प्रशासनिक प्रशिक्षण के उचित प्रबन्ध की भी पुष्टि होती है।

अलवर नरेश बख्तावरसिंह की मृत्यु के पश्चात् बन्नैसिंह के समय राजमाता का प्रभुत्व तथा करौली महारावल हरबक्शपाल की मृत्यु के बाद दत्तक पुत्र प्रतापपाल के समय राजमाता का प्रशासन पर नियंत्रण राजमाताओं के राजनैतिक प्रभाव को प्रदर्शित करता है। डूंगरपुर की राजमाता ने महारावल लक्ष्मण सिंह के बाल्यकाल में राज्य कार्य में सहयोग दिया। राजमाताओं का जयपुर, जोधपुर, बीकानेर, भरतपुर राज्यों में यही योगदान रहा।[8]

18वीं शताब्दी में रानियों द्वारा कुशलता से शासन संचालन किया गया जैसे जयपुर में रानी मां ने 1768 ई.–1778 ई. में, रानी झाली ने मेवाड में 1772 ई.–1777 ई. में, रानी कमनाबाई ने प्रतापगढ में 1774 ई. में, रानी किशोरी ने भरतपुर में जनानी ड्योढ़ी 1780 ई. में और लक्ष्मी ने 1824 ई. में प्रशासन का उत्तरदायित्व संभाला। लेकिन कालान्तर में 1818 ई. के पश्चात् तथा 19वीं शताब्दी के अंत तक इस वंश परम्परागत अधिकार को अंग्रेज अधिकारियों ने सत्ता के हित में श्रेयस्कर नहीं मानकर, उस पर नियंत्रण के लिए एक नीति निर्धारण कर, ऐसी अवस्थाओ में शासन के लिए एक कौंसिल नियुक्त कर दी । जिसका अध्यक्ष रेजिडेन्ट अथवा ब्रिटिश राज्य का एक अधिकारी होता था, जो ब्रिटिश राज्य के हितों की रक्षा करता था। जिससे राजमाताओं का अधिकार स्वतः गौण होता गया। महाराणा शंभुसिंह के समय रीजेन्सी कौंसिल की स्थापना इस नीति का उदाहरण है।

करौली में प्रतापपाल और अर्जुनपाल को बिना गोद की रस्म किये हुए ही 1837 ई. तथा 1876 ई. में क्रमशः गद्दी पर बैठा दिया गया। इसी प्रकार उदयपुर में 1838 ई. में सरदार सिंह को, 1874 ई. में सज्जन सिंह को, 1884 ई. में फतहसिंह को रानियों की सहमति के बिना ही गद्दी पर बैठा दिया गया। अंग्रेजों ने विभिन्न राज्यों में रानियों के प्रभाव और राज्य में योगदान को कम करने के लिए सब प्रकार के साधन अपनाये। कुछ स्थानो पर रानियों के चरित्र पर आक्षेप लगाकर, कुछ राज्यों में आपसी मतभेद कराकर उनकी राजनैतिक भूमिका को समाप्त किया गया।[9]

रानियों का राजनैतिक प्रभाव समाप्त करने के साथ ही उनकी आर्थिक स्वायत्ता को समाप्त करने का प्रयास किया। अतः बहुत से राज्यों में जनानी ड्योढ़ी की आय को राज्य की आय में सम्मिलित कर लिया गया। कोटा, बासवाडा, करौली में रानियों की जागीरे कम कर दी गई। प्रसिद्ध वैद्य आचार्य चतुरसेन ने जनानी डयोढी का उल्लेख किया है।

उपन्यासों, ***'ख्वास का विवाह', 'अमीरों का रोग*** में ***'जनानी ड्योढी'*** में, पासवानों का सजीव चित्रण मिलता है। और इसी प्रकार का चित्रण ***'रामहात साख प्रत्यायन राजस्थान रनिवास*** में किया है। इस प्रकार उच्चवर्ग की स्त्रियों की दशा में 19 वीं शताब्दी के अंत से गिरावट देखने को मिलती है।

2. मध्यमवर्ग

मध्यम वर्ग की स्त्रियां घर के कामकाज में व्यस्त रहती थी, जिनमें शिक्षा व जागरूकता का अभाव था। फिर भी इनमें अच्छी गृहिणी के गुण विद्यमान थे। मन्दिरों में

दर्शन के लिए जाना, कथावार्ता सुनना, धार्मिक पक्षों पर दान करना, सामाजिक उत्सवों में भाग लेना, व्रत उपवास करना आदि प्रत्येक नारी अपना कर्तव्य समझती थी और अपनी क्षमता और श्रद्धा के अनुकूल इनके सम्बन्ध में आचरण करती थी।

3. जनसामानय वर्ग

जनसामानय वर्ग की स्त्रियाँ बहुसंख्यक थी, जिनका नैतिक आचरण और दैनिक जीवन सादगी लिए हुए था। वे अपने पति के कार्य में हाथ बंटाती थी। यदि उनके पति शिल्पी होते थे तो शिल्पकार्य में, घरेलूकाम से फुरसत पाने पर अपना सहयोग देती थी। जैसे टोकरी बनाना, कपड़ाबुनना, सुनारी व लुहारी, दर्जी आदि व्यवसाय में इस वर्ग की महिलाएं बड़ी दक्षता से हाथ बंटाती थी। ग्रामीण महिलाएं खेती के काम में अपने पतियो को घास काटने, खेत को साफ करने, पशुओं की देखभाल करने आदि में सहायता पहुंचाती थी। वक्त बचने पर चरखा चलाने व चक्की पीसना उनका नियमित कार्य था, जो आज भी प्रचलित है। ग्रामीण अर्थव्यवस्था में स्त्रियों का योगदान सर्वदा प्रशंसनीय रहा है। शिल्प तथा कृषि कार्य में लगे समाज में महिलाएं अपना योगदान पुरुष के साथ कंधे से कंधा मिलाकर सदियों से करती आई है और आज भी करती है।[10]

सन्दर्भ ग्रन्थसूची

1. यादव, संतोष–19वीं व 20वीं शताब्दी में स्त्रियों की स्थिति, पृ. 93
2. शेखावत, सौभाग्यसिंह कवयित्री आनन्दकंवर और उनकी रचना. शोध पत्रिका, पृ. 47
3. राठौड़, विक्रमसिंह राजपूत नारियां, पृ. 131, राजस्थानी साहित्य संस्थान, जोधपुर–2016
4. मनुभारती, जुलाई 1981, पू. 83–85
5. कोक. 24 जनवरी, नं. 09 एवं 18, मार्च 1826 नं. 16
6. सोढी, हुकमसिंह, 4/306
7. 62 यादव, संतोष–19वीं व 20वीं शताब्दी में स्त्रियों की स्थिति, पृ. 93
8. द रूलिंग प्रिन्सेस चीपस लीडिंग परसोनेज इन राजपूताना एण्ड अजमेर, पृ
9. शर्मा गोपीनाथ–आधुनिक राजस्थान का इतिहास, पृ. 268–269
10. यादव, संतोष–19वीं व 20वीं शताब्दी में स्त्रियों की स्थिति, पृ. 93